घर, गाँव, बस्ती और मोहल्लों में मस्त बच्चे

आज कल बच्चे मज़े में हैं।बड़े बहुत परेशान हैं।महामारी से नहीं मथापच्ची और बेबात की मारामारी से।बड़ों को इस समय बच्चों के भविष्य की भी बड़ी चिन्ता हैं।होना भी चाहिए बच्चे देश का भविष्य जो हैं।पर बच्चों को न तो वर्तमान की चिन्ता हैं न भविष्य की।चिन्ता बच्चों का क्षेत्राधिकार नहीं बड़ों का विशेषाधिकार हैं।बड़े इससे बड़े परेशान हैं की बच्चे पढ़ाई में पिछड़ न जाय।पर ये तो उनकी बात हैं जो स्कूल जाते थे और महामारी के चलते स्कूल नहीं जा रहे हैं।पर हमारे देश में बहुत बड़ी संख्या शायद करोड़ो में ऐसे बच्चे हैं जो कभी स्कूल गये ही नहीं और बड़े मज़े से अपनी मस्ती में मस्त हैं।उनके पास वर्तमान की भी मस्ती भी हैं और स्वनिर्मित चिन्ता मुक्त भरपूर भविष्य भी है।निराकार स्कूल के बच्चे,अपने आसपास से सीखते बच्चे।मस्ती में झूमते बच्चे।हमारे ही नहीं दुनियाभर के देशों में ऐसे बच्चे कम ज्यादा संख्यां में मौजूद हैं।

आधुनिक काल में जो बनाबनाया और पकापकाया समाधान निकाला जाने की नयी धारा निकली हैं उसका निचोड़ हैं कि हर बच्चे को शिक्षा पाने का अधिकार हैं।राजकाज की व्यवस्था का आनन्द यह हैं कि देश के सारे बच्चों को क्या और कैसे इस अधिकार का लाभ पहुंचाया जाय यह अभी तक स्पष्ट ही नहीं हैं।सोच और व्यवस्था दोनों स्तरों पर।देश के हर हिस्से में दूर दराज से लेकर महानगरों तक बच्चे ही बच्चे हैं।पर राजकाज की व्यवस्था हर जगह हो ऐसा नहीं है।बच्चों के साथ एक मजेदार बात यह हैं कि वे व्यवस्था के पहुंचने का रास्ता नहीं देख सकते तो नतीजा यह होता हैं कि देश के करोड़ों बच्चे व्यवस्थागत शिक्षा के बगैर ही बड़े हो जाते हैं।इन या ऐसे बच्चों को बिना स्कूल गये वो सब बातेंअपने घर संसार को देखकर अपने आप करते आजाती हैं जो शायद राजकाज की या अराजकाज की शाला में पढ़ने जाते तो वे बच्चे वह सब नहीं सीख पाते जो वे बिना शाला गये अपने आप सीख गये।ऐसे बच्चे बचपन की मस्ती से भी नहीं वंचित हुए और जीवन जीने की जरूरतों को भी अपने आप सीख गये।जैसे जंगलों के झाड़ पेड़ बिना खाद पानी सार संभाल के अपने आप घने जंगल में बदल जाते हैं।

हम इतने लम्बे काल खण्ड के बाद भी यह बात नहीं समझ पाते की बचपन के पास समय कम हैं।जिन्दगी भले ही बहुत लम्बी हो पर बचपन तो एक अंक का ही काल हैं।इसी से शिशु अवस्था और बाल्यावस्था को किसी की कोई चिन्ता नहीं।चिन्ताविहीनता ही बच्चों की सबसे बड़ी ताकत है।जो निश्चलता,भोलापन और सरलता बचपन में होती हैं वह बड़े होने पर न जाने कहां चला जाता हैं।पर हम बड़े लोग बच्चों से कुछ सीखना नहीं चाहते निरन्तर बच्चों को कुछ न कुछ सीखाते रहना चाहते हैं।यदि हम बालमन को अपना गुरू माने तो हमारी कार्यपद्धति सरल और संवेदनशील हो सकती है खासकर बालशिक्षण के क्षेत्र में।बालकों के मन में जिज्ञासा का सागर होता हैं उनकी जिज्ञासा का कोई ओर छोर नहीं होता।उनके जिज्ञासा मूलक अंतहीन सवालों से बड़े लोगों ने यह बात सीखनी चाहिये की देखने समझने की एक दृष्टि यह भी हो सकती हैं।यदि बालमन को हम अपना गुरू माने ले तो जीवन में व्यापक समझदारी का नया रास्ता खुल सकता हैं।बच्चों की अंतहीन जिज्ञासा ही उन्हें नयी बातें सीखते

रहने को प्रेरित करती रहती हैं।बालदृष्टि का मूल पकड़े बिना हम बालशिक्षण का ऐसा ढ़ाचा खड़ा कर चुके हैं जिसमें हम बालमन की हमारी समझ पर खुद ही सवालिया निशान खड़ा कर देते हैं।

एक बच्चे और बड़े के बीच जो संवाद हैं उसमें सहजता धीरज और निरंतरता की त्रिवेणी होनी चाहिए तभी बच्चों और बड़ो के आत्मिय सम्बन्धों का विस्तार सहजता से संभव हैं।बच्चे निरन्तर नयी नयी बातें देखना सुनना समझना और जानना चाहते हैं और प्राय :बड़ों के पास उतना धीरज और समय नहीं होना बाल शिक्षण की बड़ी समस्या हैं।छोटे छोटे गांवों के बच्चे घर से ज्यादा गांव में खेलते घूमते हैं।एक तरह से गांव ही उनका घर होता है।आदिवासी क्षेत्र के बच्चे जंगल पहाड़ नदी कई तरह के पशु पक्षी और वनस्पति,मछ्ली,मुर्गी अंड़ो के बारे में व्यापक समझ अपने आप बना लेते हैं।उन्हें अक्षर ज्ञान न के बराबर होता हैं पर दैनन्दिन जीवन का सामान्य ज्ञान अपने आप प्रत्यक्ष अनुभव से होता रहता हैं।

आज के काल में गांव घर समाज में बच्चे संस्थागत सरकारी शाला और खेत खलिहान नदी किनारा जंगल पहाड़ बकरी मुर्गी गाय बैल शाला न जाने वाले बच्चों में बंटते जा रहे हैं।जो बच्चे शाला नहीं जा रहे हैं उनका अधिकांश अक्षर ज्ञानी तो नहीं हैं पर इतनी सारी गतिविधियों से सीखने की सहज प्रक्रिया का क्रम चलता रहता है।हममें से अधिकांश यह मानकर चलते हैं की बच्चों को निरन्तर सिखाते रहना हैं बच्चों को अपने आप करने और सीखने से बच्चे कहीं पिछड़ न जावे।हम बच्चे के भविष्य को लेकर चिंतित रहते हैं,पर बच्चे माता पिता परिवार के सानिध्य में मस्त और व्यस्त रहते हैं।साथ ही बचपन में अपने मन से कुछ न कुछ काम करना चाहते है पर हम भययग्रस्त मन के कारण बच्चे को रोकते टोकते रहते है।इससे बच्चों की सीखने की स्वाभाविक क्षमता कमजोर होती हैं।असुरक्षा के भय के कारण ही बाल शिक्षा का बड़ा बाजार आज खड़ा हो गया है।बाजार बच्चे के स्वाभाविक विकास की आधारभूमि खड़ी करने के बजाय अंतहीन प्रतिस्पर्धा का ऐसा चक्र हमारे मन मस्तिष्क में डाल देते हैं जिससे निकलना हर किसी के बस में नहीं होता।

आज हम जहां आ खड़े हुए हैं वहां हमारे सामने कुछ भी स्पष्ट नहीं हैं।हम समझ नहीं पा रहे हैं हम क्या करें ? क्या न करें ?इस स्थिति में बच्चे तो तेजी से अपने बचपन की मस्ती, शिक्षा जगत के असमंजस में खो रहे हैं।आधुनिक और आगामी दुनिया मनुष्य के पारस्परिक व्यवहार और समझ के बजाय यंत्राधारित जीवन व्यवहार की दिशा में तेजी से बढ़ रही हैं जिसमें शहरी समाज के अधिकांश परिवारों के बच्चे अपने घरों में बैठे बैठे अपने बड़ों को सारे कामों को यंत्र पर करते देख रहे हैं ।बच्चा न तो बड़ों से कुछ नया सीख पा रहा हैं और शहरी सभ्यता का बड़ा हिस्सा बच्चों को समय भी नहीं दे पाता हैं।बच्चे शहरी हो या ग्रामीण अमीरों के हो या गरीबों के वे अपने माता पिता का ज्यादा से ज्यादा समय चाहते हैं।छोटे बच्चों की आंखों में हमेशा मां की खोज दिखाई देती हैं।माता पिता के साथ ही बच्चे मस्त रहते हैं यह मनुष्य जीवन का सनातन सत्य हैं।

अनिल त्रिवेदी
अभिभाषक , स्वतंत्र लेखक तथा किसान
त्रिवेदी परिसर ३०४/२भोलाराम उस्ताद मार्ग,ग्राम पिपल्याराव ए बी रोड़ इन्दौर मप्र
Email aniltrivedi.advocate@gmail.com
Mob 9329947486